पुस्तक परिचय

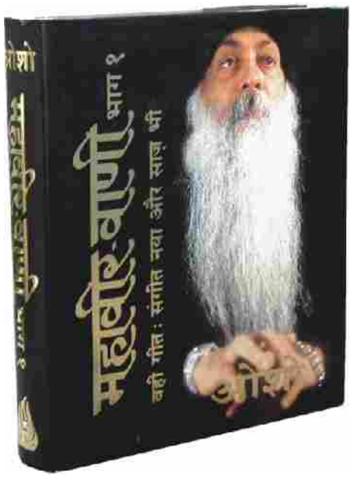


# महावीर-वाणी

## भाग–1

ओशो की पुस्तक की प्रस्तावना लिखना ऐसा ही है जैसे कण से कहा जाए कि ब्रह्मांड के विषय में कुछ कहो।

*ओशो व्यक्ति नहीं घटना हैं।*
*विराटम् का नर-तन में आकर सिमटना है।*

करुणावश, मुक्ति के किनारे से लौटे, क्योंकि
अमृता वाणी से परमानंद बंटना है।

महावीर मात्र महावीर थे। कृष्ण, बुद्ध, जीसस, मोहम्मद, लाओत्सु, गुरजिएफ–जितने जो भी उपलब्ध हुए हैं, प्रत्येक वही थे, जो वे थे, किंतु मेरा खयाल है कि कदाचित, पृथ्वी पर पहली बार ऐसा घटित हुआ है कि एक ही व्यक्ति ओशो में आज तक की समस्त उपलब्ध चेतनाएं अवतरित हो गई हैं। एक ओर जहां मेरी यह प्रतीति है, वहीं दूसरी ओर यह एक तथ्य है कि ओशो किसी तीर्थंकर अथवा अवतार की न तो पुनरुक्ति हैं और उन उनमें से किसी के प्रतिनिधि। वे अद्वितीय, अनूठे और सर्वथा मौलिक हैं। ओशो ने स्वयं भी कहा है कि मैं किसी की परंपरा में नहीं हूं। मैं अपनी परंपरा का प्रारंभ हूं, जैसे ऋषभ जैन परंपरा के प्रारंभ थे।

*सत्य की बस्ती अजीब बस्ती है।*
*लूटने वालों को तरसती है।*

ओशो, जो कवियों के कवि, महाकवियों के महाकवि हैं, जो गद्य में पद्य बोलते हैं, ने महावीर को एक ही पंक्ति में परिभाषित कर दिया है :

'जैसे पर्वतों में हिमालय है या शिखरों में गौरीशंकर, वैसे ही व्यक्तियों में महावीर हैं।'

ओशो ने महावीर की अंतश्चेतना की गहराई पर्त दर पर्त जिस प्रकार अपने विभिन्न प्रवचनों में उदघाटित की है, उनकी वाणी अथवा देशनाओं को वर्तमान तर्क-प्रधान युग में विज्ञान सम्मत प्रमाणों के साथ व्याख्यायित किया है, वह अद्वितीय और अप्रतिम है। मैं नहीं समझता कि अतीत में कभी किसी अन्य ने महावीर के वचनों को वह अर्थवत्ता, वह गरिमा एवं महिमा प्रदान की हो जो ओशो से संभव हुई है। ऐसा प्रतीत होता है कि पच्चीस सौ वर्ष पहले आकाश में विलुप्त महावीर की चेतना, उनकी दिव्यात्मा, उनकी तत्कालीन भाव एवं ध्वनि-तरंगों से सीधे संपर्क कर उन्हें एवं उनकी वाणी को अपने इन प्रवचनों के रूप में ओशो ने समग्रता में पुनरुज्जीवित कर दिया है।

न केवल महावीर की आंतरिकता को ही, बल्कि उनके भीतर जो घटित हुआ तथा उसके फलस्वरूप उनके बाह्याचरण में जो प्रकट हुआ, उसको भी ओशो ने नये आयाम प्रदान किए हैं।

विश्व में पहली बार ओशो के प्रेमी, उनका जन्म चाहे किसी भी देश या संप्रदाय में हुआ हो, प्रत्येक प्रज्ञापुरुष को ओशो के प्रवचनों एवं प्रकाशनों के माध्यम से समझने का प्रयत्न कर रहे हैं। इस प्रकार एक ऐसा नया समाज निर्मित हो रहा है जिसका न कोई राष्ट्र है, न कोई संप्रदाय। उसके लिए सभी प्रज्ञापुरुष उसके हैं।

ओशो को सम्यक रूप से समझने के लिए साहस और चित्त की सरलता आवश्यक है। मेरा निवेदन है जैनों से और गैर-जैनों से भी कि वे 'महावीर-वाणी' को ऐसे पढ़ें कि जैसे उन्हें महावीर के बारे में बिलकुल कोई जानकारी नहीं है और पढ़ कर यदि किसी को लगे कि महावीर और ओशो प्रेम करने जैसे हैं तो फिर वे नहीं चूकें।

महावीर ने जिस प्रकार अपने 'स्व' को पहचाना, अपनी भगवत्ता को जाना और जिसके साक्षात उदाहरण आज ओशो हैं, इनसे प्रेरणा लेकर यदि हमने थोड़ा-सा भी अपने भीतर झांकने का प्रयत्न किया तो हमारा यह जन्म सार्थक हो सकता है; अन्यथा तो हम जैसे पहले अनेकानेक जन्मों में चूकते रहे हैं, हमारा यह जन्म भी व्यर्थ चला जाएगा।

अंत में, मैं पाठकों से निवेदन करूंगा कि वे 'महावीर-वाणी' की पावन गंगा में अवगाहन कर अपने को धन्य करें।

मैं, मा योग नीलम के प्रति आभारी हूं कि उन्होंने मुझे यह सौभाग्य प्रदान किया कि ओशो की महावीर-वाणी के लिए दो शब्द मैं कह सका।

*जो हुई क़लम की मर्ज़ी, लिख डाला,*
*मेरा इसमें दायित्व नहीं कोई।*

ओशो जो लिखवा देते हैं, लिख लेता हूं। मेरे लिए तो ओशो :

*तुम युग के अष्टावक्र, पूर्व के गुरजिएफ।*
*शंकराचार्य के श्लोकों के तुम नये लेख।*
*तुम 'नमोकार' साकार, श्रेष्ठतम मंत्र-पूत*
*जो संत हुए, होंगे, उन सब के शब्द दूत।*
*तुम पतंजलि के योग, योग के परमशिखर।*
*सूफी संतों की वाणी के अमृत-निर्झर।*
*तुम झेन फकीरों के चिंतन के समयसार,*
*तुम लुप्तगुप्त तांत्रिक प्रतीत के नव प्रसाद।*
*तुम चरम भावना, चरम तर्क, वाणी-विराम,*
*परमात्मा का पर्याय बना ओशो-नाम।*
*'तन्मय' न तुम्हारे योग्य, मगर इतना कर दो,*
*उसके विनीत मस्तक पर अपना कर धर दो।*

*– तन्मय 'बुखारिया' (ललितपुर)*
*महावीर-वाणी की प्रस्तावना के कुछ अंश*